International Referred Research Journal, August,2010 ISSN- 0974-2832VoL.II *ISSUE-19

शोध पत्र- हिन्दी

उत्तर शती के श्रेष्ठ हिन्दी कवियों के काव्य में प्रकृति -चित्रण

* पूनम

* शोधार्थी, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

August, 2010

संसार में प्रकृति अनेक रूपों में व्याप्त हैं। यह एक विराट सत्ता है। यह कभी मधुर सुसज्जित रूप में हमारे सामने आती है, कभी रूखे और कर्कश रूप में। यह कहीं सुन्दर और विशाल है कई उग्र और भयंकर। अपनी चिर साहचर्य की भावना के कारण साहित्यकार प्रकृति के सभी रूपों में लीन होता है। साहित्यकार न योगलिप्सु है न ही तमाशबीन, वह सच्चा सहृदय हैं, अतः निर्झर का बहता हुआ जल तो उसे प्रभावित करता ही है, गिरिवर की कठोर चट्टानें भी उसका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करती हैं। वैदिक साहित्य और संस्कृत साहित्य में तो प्रकृति–चित्रण हुआ ही है। हिन्दी साहित्य में भी आदिकाल से अब तक साहित्यकार प्रकृति चित्राण करते रहे हैं। वाल्मीकि, कालिदास, भवभूति आदि संस्कृत कवियों ने प्रकृति का साधारण और असाधारण ढंग से प्रकृति चित्रण किया है। भारत के ही नहीं पाश्चात्य कवियों की लेखनी भी प्रकृति का चित्रण करते हुए रमी है।अंग्रेजी के पिछले कवियों के वड्र्सवर्थ की दृष्टि सामान्य में चिर–परिचित, सीधे–सादे प्रशान्त और मधुर दृश्यों की ओर रहती थी। पर शैली की असाधारण भव्य और विशाल की ओर।[1] उत्तरी–शती के हिन्दी कवियों में नागार्जुन, शमशेर बहादुर सिह, शिव मंगल 'सुमन', त्रिलोचन शास्त्री, केदारनाथ अग्रवाल, अज्ञेय, भवानीप्रसाद मिश्र, नरेश मेहता, धर्मवीर भारती आदि प्रमुख हैं।

प्रकृति क्या है?

प्रकृति और साहित्य का गहरा संबंध है। इस पर विचार करने के पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि प्रकृति क्या है? यहाँ प्रकृति शब्द अंग्रेजी भाषा के 'नेचर' शब्द के लगभग समान अर्थों में समझा जा सकता है। परन्तु यह 'नेचर' शब्द भी अपने प्रयोगों की विभिन्नता के कारण कम भ्रामक नहीं है। परम्परा के अर्थ में समस्त बाह्य जगत को उसके प्रत्यक्षीकरण की रूपात्मकता में और उसमें अधिष्ठित चेतना के साथ प्रकृति माना गया है। परन्तु यह तो व्यापक सीमा है। इसके अन्तर्गत कितने ही स्तरों को अलग–अलग प्रकृति के नाम से कहा जाता है। प्रकृति की अनुप्राणित चेतना को अधिकांश में किसी दैवी शक्ति के रूप में माना गया है। तत्त्व–वादियों ने प्रकृति का प्रयोग दृश्य जगत् के लिए किया है और इसके परे किसी अन्य सत्य के लिए भी।[2] उपर्युक्त उदाहरण से यह स्पष्ट होता है कि बाह्य दृश्य जगत् ही मुख्य रूप से प्रकृति है। हमारा वैदिक साहित्य विराट प्रकृति ब्रह्म की देन हैं। ततसम्बन्धी चिन्तन ने हमारे जीवन दर्शन को विकसित किया है। प्रकृति ब्रह्मा की तरह विराट हैं। जैसे पूर्ण ब्रह्म से पूर्ण ले लेने के बाद भी पूर्ण शेष बच जाता है। वैसे ही अब तक विकसित साहित्य सृजित होने के बावजूद प्रकृति हमें निरन्तर सृजन की प्रेरणा देती रहेगी। हमारे ऋषियों को धरती का सौन्दर्य अत्यन्त प्रिय था। वे नदी, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र आदि से प्रभावित थे। वे अनन्त काल तक इन्हें देखते ही रहना चाहते थे–

यावत तेभि पश्यामि भूमे सूर्येण भेदिना
तावदन्ये चक्षुर्यामैष्टोत्तरामुतरां स माम्।[3]

(हे भूमि!) प्रकाशित सूर्य के साथ जब तक तेरी ओर देखता रहूँ, तब तक वर्ष–वर्षान्तर तक मेरी दृष्टि क्षीण न हो)

संस्कृत साहित्य प्रकृति के मनोरम चित्राों से परिपूर्ण हैं। मनुष्य की सभ्यता और संस्कृति के विकास के साथ–साथ उसकी कल्पना तथा रचनात्मक उद्भावना शक्ति भी संस्कृत होती गई है। संस्कृत कवियों ने प्रायः प्रकृति की मनोहर छवियों में नारीत्व का आरोप किया है। नारी और प्रकृति दोनों मिलकर मनुष्य की संयोग भावना को उत्तेजना व तृप्ति देती है।[4] नारी के अंगों से सम्पृक्त होकर प्राकृतिक वस्तुएँ और भी उद्दीपक हो उठती है–

कुसुमेव न केवलमार्तवं नवमशोकतरोः स्मरपदनीय
किसलय प्रसवोपि विलासिनां मदयिता दयिता
श्रवणार्पितः।।[5]

(ऋतु के साथ विकसित अशोक वृक्ष के नये पूफल ही कोमोद्दीपक नहीं थे, प्रियतमा के कानों में सजाए हुए पत्ते भी विलासी प्रेमियों की कामना को उद्दीप्त करते हैं।)

हिमालय का वर्णन कालिदास और भारवि दानों ने ही किया है। परन्तु हिमालय की विशालता को व्यक्त करने के लिए माघ का एक श्लोक अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। इसी श्लोक के रचियता होने के कारण उन्हें 'घण्टा माघ' कहा जाता है–

उदयति वितोहर्वरश्मि रज्जाव हिम स्वौ हिम धाम्नि याति
चास्तम् वहति गिर रभं बिलम्बि घण्डा द्वय परिवरित वारणेन्द्र
लीलाम।[6]

जब रस्सियों जैसी विस्तृत ऊँची किरणों वाला सूर्य उदित होता है और वैसे ही किरणों वाला चन्द्रमा अस्त होता है। उस समय यह पर्वत उस गजराज के समान जान पड़ता है, जिसके दोनों बाजुओं में रस्सियों से बंधे घंटे लटक रहे हैं।

इस प्रकार संस्कृत महाकवियों ने प्रकृति चित्राण के द्वारा अत्यन्त कुशलता से सृष्टि का रहस्योद्घाटन किया है।

हिन्दी साहित्य ये भी आदिकाल से अब तक साहित्यकार प्रकृति चित्राण करते रहे हैं। संदेश रासक, पृथ्वीराज रासो, ढोला मारूरा दोहा, जैसे काव्यों में प्रकृति वर्णन उद्दीपन रूप में ही आया है।

भक्तिकाल में निगुण भक्ति धारा के प्रमुख कवि कबीर ने भी साधनात्मक रहस्यवाद का वर्णन करते हुए प्रकृतिक उपमानों और रूपकों का प्रयोग किया है, किन्तु उनका प्रकृति–चित्राण अभिष्ट नहीं रहा। सगुण भक्ति शाखा

के प्रसिद्ध कवि गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में तथा अन्य रचनाओं में भी कई स्थलों पर प्राकृतिक वर्णन विशद रूप में किया है। उन्होंने वर्षा और शरद का बहुत ही मनोरम चित्र खींचा है।

वन उपवन वापिगा तड़ागा। परम सुभग सब दिसा विभागा

रीतिकाल में बिहारी, मतिराम, देव, नेवाज, बेनी ने अपने काव्य में प्रकृति को समुचित स्थान दिया है। आधुनिकाल में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तक हिन्दी गद्य और पद्य दोनों का विकास हुआ। चन्द्रावली नाटिका में भारतेन्दु का यमुना वर्णन और सत्य हरिश्चन्द्र नाटक में गंगा और संध्या का वर्णन प्रसिद्ध है।

भारतेन्दु काल के अन्य कवियों ने प्रकृति चित्रण किया है, परन्तु छायावादी कवियों की रचनाओं में ही ऐसा वर्णन विशद् रूप में प्राप्त होता है। प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी वर्मा छायावाद के प्रमुख स्तम्भ माने जाते हैं। प्रसाद ने इड़ा का जो चित्र खींचा है वह ऋग्वेद की उषा के समकक्ष है–

बिखरी अलकै ज्यों तर्क जाल।,[8] (कामायनी) पंत विहग बालिकाओं की सहज चेतना और उनके संगीत–माधुर्य से प्रभावित होकर पूछते हैं–

प्रथम रश्मि का आना रागिनी
तूने कैसे पहचाना?
कहाँ–कहाँ हे बाल–बिहंगिनि
पाया तूने यह गाना? –पंत (रश्मि–बंध)

महादेवी के गीतों में इनकी आत्मा प्रकृति के साथ अपना तादात्म्य कर लेती है–

मैं नीर भरी दुःख की बदली।[9]

बादलों की घनघोर आवाज से निराला प्रभावित हुए। अपनी कविता के माध्यम से कुकुरमुत्ता को गुलाब से ऊपर बताकर उन्होंने उसे अमरत्व प्रदान किया। निष्कर्ष रूप से हम कह सकते हैं कि वैदिक काल के अब तक साहित्यकार प्रकृति से प्रभावित और उत्प्रेरित होते रहे हैं। पेड़–पौधे। नदी–झरने तथा पशु–पक्षियों के माध्यम से विभिन्न ऋतुओं में प्रकृति–नूतन श्रृंगार करती है और साहित्यकारों के लिए प्रेरणा का स्त्रोत बनती हैं। आज का जनवादी साहित्यकार भी प्रकृति से अछूता नहीं है, अन्तर है, मात्रा चिन्तन का। आज के साहित्यकार को रोटी चाँद की तरह तथा श्रमिक के स्वेदकण आकाश के नक्षत्रों की तरह दृष्टिगोचर होते हैं। अतः यहाँ उत्तरशती के श्रेष्ठ हिन्दी कवियों के काव्य में प्रकृति–चित्राण का अध्ययन अपेक्षित है–

नागार्जुन–प्रकृति नागार्जुन की कविताओं में अपने सारे रंग रूपों में, सारी मुद्राओं में, सारे संभार के साथ आई है। प्रकृति के प्रति इतनी उन्मुक्त और खुला अनुराग उसके प्रति इतनी ललक–भरी आत्मीयता आधुनिक कविता में कम ही मिलेगी। उनकी ढरों कविताएँ बादल पर हैं। उनके यहाँ हर ट्टतु के बादल है। बादल ही नदी बदलियाँ भी हैं, शरारती और बदनाम बदलियाँ। नागार्जुन ने बादलों के पूरे परिवार को अपनी कविताओं का विषय बनाया है।

बादल को घिरते देखा है, कविता में हिमालय पर्वत के श्वेत शिखरों पर बादल को घिरते हुए देखकर कहा है–

'अमल धवलगिरि के शिखरों पर
बादल को घिरते देखा हैं
छोटे–छोटे मोती जैसे
उसके शीतल तुहिन कणों को,
मानसरोवर के उन स्वर्णिम
कमलों पर गिरते देखा हैं,
बादलों को घिरते देखा है।,[10]

शमशेर बहादुर सिंह :

शमशेर प्रकृति के उन्मुक्त चित्राकार नहीं हैं, अपितु प्रकृति कवि की भावनाओं के अनुरूप रूप–सौन्दर्य को बदलती रहती है। उनकी कविताओं में सुबह और शाम के चित्रा अधिक हैं। प्रातःकाल के आकर्षक नभ को प्रतिबिम्बित करते हुए कवि ने लिखा है–

प्रातःनभ था। बहुत नीला शंख जैसे भोर का नभ बदुतकाली सिल जरा से लाल केसर/कि जैसे धुल गयी हो।[11]

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

'अज्ञेय' बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार हैं। अपने 'शेखर : एक जीवनी' उपन्यास द्वारा वे हिन्दी के एक उदीयमान और विशिष्ट साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित हुए। 'दुर्वाचल', 'सो रहा है झोंप', 'क्वार की बयार', 'शरद', 'कल की पूनों और पावस–प्रात, उनकी मुख्य प्रकृति परक रचनाएँ हैं। 'कल की पूनों' शीर्षक कविता में ज्वार के खेत से निकल कर पफलांगती जाने वाली शशि की जोड़ी चांदनी में झिलमिलाते निम्नलिखित दृश्य को प्रत्यक्ष बना देती है–

'छिटक रही चांदनी
मदमाती, उन्मादिनी
कलगी और सजाव ले
कास हुए हैं बावले।'[12]

केदारनाथ अग्रवाल

कवि केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में मानवीकरण के जो चित्र देखने को मिलते हैं, उनमें प्रकृति के क्रिया–व्यापार और मानव की भावनाओं को एक साथ दिखाने की कोशिश मिलती हैं। कुछ प्रयोग प्रकृति की स्वाभाविकता को प्रस्तुत करते हैं जैसे–

'चोली फटी सरस सरसों की
नीचे गिरा फागुनी लहंगा,
ऊपर उड़ी चुनरिया नीली,
देखो हुई पहाड़ी विवसन
आतप–तप्ता।'[13]

भवानीप्रसाद मिश्र

मिश्र जी के लिए कविता कोरा बौद्धिक विलास न होकर आत्मभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। मिश्र जी गांधीवादी धारा के कवि हैं। वे इसलिए गीत बेचने निकले हैं, क्योंकि लोगों ने तो ईमान को ही बेच दिया है। 'कमल के पूफल', सतपुड़ा के जंगल', 'बंद टपकी एक नभ से', 'मंगल वर्षा' आदि कविताएँ प्रकृति के निकट हैं जैसे–

'शब्द टप टप टपकते हैं फूल से
सही हो जाते हैं मेरी भूल से।'[14]

शिवमंगल सिंह 'सुमन'

कवि शिवमंगल सिंह 'सुमन ने प्रकृति के आलम्बनात्मक, संवेदनशीलक, उपदेशक, रहस्यात्मक तथा उपादान रूपों का चित्रण सहजता से किया है। सुमन जी की 'गौर या' और 'तितली', 'हिल्लोल' में प्रकृति का बड़ा सुन्दर चित्राण किया है। आंगन में पफुदकती गौर या का सौन्दर्य मनोरम बन पड़ा है–

'नीलम की–सी नीली आँखें/सोने–से सुन्दर पर अंग–अंग बिजली–सी भर/फुदक रही तू फर–फर।'[15]

साथ ही सुमन जी की कविताओं में प्रकृति एक उपदेशिका के रूप में उपस्थित हुई हैं। कंटकों के मध्य विकसित गुलाब का पुष्प मनुष्यों को दुःखों में भी प्रसन्न रहने का उपदेश दे रहा है।

त्रिलोचन शास्त्री :

त्रिलोचन की प्रकृतिपरक कविताओं को दो रूपों में देखा जा सकता है। एक रूप वह है, जिसमें कवि जीवन–जगत् के सहज सौन्दर्य का चित्र प्रस्तुत करता है। 'बादल घिर आये', 'शरद का यह नीला आकाश', 'आ गयी है रात', 'चाँदनी रात' शीर्षक कविताएँ इस दृष्टि से रेखांकित की जा सकती हैं जैसे–

'गेहूं जौ के ऊपर सरसों की रंगीनी छाई है, पछुआ आ आकर इसे झुलाती।'[16]

कवि के यहाँ प्रकृति का दूसरा रूप भी है, जहाँ कवि प्रकृति के क्रियाकलापों के माध्यम से जीवन के विविध पक्षो को प्रस्तुत करने की कोशिश करता है। 'गुलाब और बुलबुल', 'सबका अपना आकाश' एवं 'ताप के ताए हुए दिन' की कविताओं में प्रकृति के चित्रों को देखा जा सकता है। 'धरती' में भी कवि ने कहा है–

पत्ते केवल पतझर आने पर ही नहीं झरा करते जीवन का रस जब भी सूख जाता है, तभी बिना कुछ झिझके बिना मुहूर्त–प्रतीक्षा के ही झर जाते हैं।'[17]

गिरिजा कुमार माथुर :

गिरिजाकुमार माथुर जी के काव्य का एक बहुत बड़ा भाग प्रकृति को समर्पित हैं। प्रकृति की अनगिनत छवियाँ अनेक रूपों के साथ आकर इनकी कविताओं में बंध गई हैं। प्रकृतिचित्रण की दृष्टि से 'ढाकबनी', 'धूप की उन', 'सावन की रात', 'शाम की धूप', 'चिलका झील', 'बसंत की पहली शाम' कविताएँ विशेष उल्लेखनीय हैं। 'ढाकबनी' कविता में बुन्देलखण्ड की प्रकृति का जीता–जागता चित्रा प्रस्तुत करते हुए माथुर जी लिखते हैं–

'लाल पत्थर, लाल मिट्टी, कंकड़ लाल बजरी।
लाल फूले ढाक के वन डांग गाती फाग कजरी।'[18]

नरेश मेहता :

प्रकृति–प्रेम नरेश मेहता के सम्पूर्ण काव्य का नाभिकीय बिन्दु है जो एक और रोमांटिक भावबोध भरकर उन्हें प्रकृति का उत्सुक चितेरा और भोक्ता बनाता है तो दूसरी ओर प्राकृतिक उपादानों की अशेष सुषमा का पान करते हुए भीतर छिपे निगूढ़ प्रयोजनों को दृष्टिगत करा उदात्त मानवीय मूल्यों का अन्वेषण एवं विराटता से साक्षात्कार कराता है। 'चाहता मन', 'उषस', 'जन गरबा चरैवति', 'मेघ मैं' आदि कविताओं में प्रकृति का सुन्दर एवं सटीक चित्राण है। 'जन गरबा चरैवति' में कवि सूरज के संग–संग चलते रहने का परामर्श देता है, क्योंकि गति जीवन का नियम है। कवि को मनुष्य की ताकत पर भरोसा है। क्योंकि एकमात्रा वही जीर्ण वस्त्राों को उतारकर नवीन मूल्यों पर स्वीकृति की मुहर लगाता है–

मानव जिस ओर गया/नगर बने, तीर्थ बने/तुम से है कौन बड़ा? त्यागो सब जीर्ण वसन/नूतन के संग–संग चलते चलो।'[19]

धर्मवीर भारती

धर्मवीर भारती प्रेम के साथ सौन्दर्य के भी कवि हैं। उनके सौन्दर्य वर्णन में नारी और प्रकृति–सौन्दर्य की छवियाँ दृष्टिगत होती हैं। भारती के काव्य में प्रकृति–सौन्दर्य का चित्राण उद्दीपन–रूप में अधिक मिलता है। वसंत के आगमन पर पूफलों का खिलना, भंवरों की गुंजार, तितलियों का पूफल पर सो जाना, फागुन की कलियों का चटकना आदि प्रेयसी से मिलने की प्रेरणा देकर सौन्दर्यानुभूति में वृद्धि करते हैं–

'उस दिन तुम उस बौर लदे आम की
झुकी डालियों से टिके कितनी देर मुझेवंशी से टेरते रहे
ढलते सूरज की उदास काँपती किरणें
तुम्हारे माथे के मोरपंखों
से बेबस विदा मांगने लगी
मैं नहीं आई। मैं नहीं आई।'[20]

निष्कर्ष :

अन्त में कहा जा सकता है कि विज्ञान में जो बुद्धि है, दर्शन में जो सृष्टि है वही कविता में कल्पना है।[21] कवि की कल्पना प्राकृतिक–दृश्यों से जागृत और प्रभावित होती है। कवि प्रकृति से मनोरम–विचारों को प्राप्त कर अपनी कुशल लेखनी द्वारा उसे जनता तक पहुंचाता है। उत्तर–शती के कवियों के काव्य में प्रकृति कहीं एक उपदेशक के रूप में, कहीं पर आलम्बन और उद्दीपन रूप में, कहीं रहस्यात्मक रूप में, हमें दृष्टिगोचर होती हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1.रामचन्द्र शुक्ल, चिन्तामणि, इण्डियन प्रैस, प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद, 1978, पृ. 103 2. रघुवंश, प्रकृति और काव्य, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस–96, दरियागंज, दिल्ली, 1960, पृ. 33.ओंकार शरद्, महादेवी साहित्य, सेतु प्रकाशन, झांसी, 1969, पृ. 39 4.देवराज, भारतीय संस्कृति, प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग ;उ. प्र.द्ध द्वितीय सं. 1961,पृ.1185.कालिदास, रघुवंश, 6/35, 5 6. माघ, शिशुपाल वध, 4/19 7. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस गोरखपुर, बालकाण्ड, पृ. 89 8. ओंकारशरद, महादेवी साहित्य, भाग–1,सेतु प्रकाशन, झांसी, 1969, पृ. 218 9. महादेवी वर्मा, आधुनिक वि. सं. डॉ. ओमप्रकाश शर्मा शास्त्राी, डॉ. राम प्रकाश, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1976, पृ. 49 10.शोभाकान्त मिश्रा, नागार्जुन की चुनी हुई रचनाएँ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1985, पृ. 19 11.शमशेर बहादुर सिंह, कुछ कविताएँ, पृ. 21 12. अज्ञेय, हरी घास पर क्षण भर, पृ. 37 13.केदारनाथ अग्रवाल,पूफल नहीं रंग बोलते हैं, 154 14.भवानी प्रसाद मिश्रा, दूसरा सप्तक, प्रथम संस्करण, पृ. 7 15.शिव मंगल सिंह 'सुमन, सुमन समग्रः।, पृ. 64 16. लालचंद गुप्त 'मंगल',उत्तर–शती के श्रेष्ठ हिन्दी कवि, पृ. 91 17.त्रिलोचन शास्त्राी, धरती, पृ. 95 18.गिरिजाकुमार माथुर, ढाकबनी, पृ. 20 19.नरेश मेहता, अज्ञेय, दूसरा सप्तक, पृ. 116 20. लालचंद गुप्त 'मंगल', उत्तर–शती के श्रेष्ठ हिन्दी कवि, सूर्य भारती प्रकाशन, दिल्ली,जनवरी, 2003, पृ. 115